सत्ता में बैठे सभी लोग देश का इस्लामीकरण करने में लगे हैं

पृथ्वीराज चौहान और जयचंद के वंशज परस्पर संघर्ष कर रहे हैं। हिंसा, हत्या और लूट का बाजार गर्म है। महमूद गजनबी तथा मोहम्मद गोरी के वंशधर मुस्कुरा रहे हैं, माल खा रहे हैं और धीरे-धीरे अपनी सैन्य-शक्ति (वोटबैंक) का संख्या बल बढ़ाते हुए भारतवर्ष की समस्त सनातन-परंपराओं को निर्मूल करने की दिशा में निरंतर सक्रिय हैं। 'चिकन नेक'काटने का अल्टीमेटम मिल चुका है, फिर भी जयचंद, मानसिंह और जयसिंह के अनुयायी चेत नहीं रहे। वे मस्त हैं और अभी तैमूरी मानसिकता वालों के सहयोग से सत्ता-सुख भोगने में व्यस्त हैं। अभी-अभी बंगाल में बहुमत पाकर उन्मादित और आनंदित भी हैं। गोरी और जयचंद की दुरभिसंधि को समझकर भी अपनी विजय के प्रति आश्वस्त पृथ्वीराज के ध्वजवाहकों की अतिरिक्त आत्ममुग्धता और यत्किंचित अदूरदर्शिता के कारण चुनाव मैदान में अभी-अभी उन्हें भारी हानि हुई है किन्तु उनके पैर रणभूमि में अधिक दृढ़ता से जम गए हैं। तीन से सतहत्तर तक की यात्रा भी एक बड़ी उपलब्धि है। साथ ही देश के लिए यह एक शुभ संकेत भी है।

भारतीय इतिहास में पृथ्वीराज, जयचंद और शहाबुद्दीन मोहम्मद गोरी सात सौ वर्ष पुराने ऐतिहासिक चरित्र हैं किंतु भारतीय-समाज के धरातल पर यह तीनों ही जीवित-जागृत व्यक्तित्व हैं, जिनका कृतित्व यहाँ की जीवन-शैली को सतत प्रभावित करता हुआ दिखाई देता है। वस्तुत: यह हमारे समाज की तीन प्रमुख धाराएं हैं जिनका प्रवाह विगत सात सौ वर्षों से हमारे जीवन को निरंतर प्रभावित कर रहा है। भारतवर्ष का इस्लामीकरण हो रहा है। एक ओर हिन्दू समाज अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए संघर्षरत है तो दूसरी ओर मुस्लिमों की आक्रामक मुद्रा में कोई कमी नहीं आयी है। स्वतंत्रता से पूर्व और पश्चात की असंख्य घटनाएं इस तथ्य की साक्षी हैं। पश्चिम बंगाल की समसामयिक हिंसक घटनाएं भारतीय समाज के धरातल पर छिड़े उपर्युक्त संघर्ष का नूतन संस्करण हैं।

भारतीय समाज लम्बे समय से तीन धाराओं में विभक्त है। पहली धारा के लोग भारतीय-संस्कृति की रक्षा के लिए संघर्षरत हैं और अपनी खोई हुई प्रतिष्ठा पुन: प्राप्त करना चाहते हैं किन्तु संगठन के अभाव में सत्ता से दूर रह जाते हैं। दूसरी धारा के भारतीय विदेशी आक्रामक शक्तियों के सहयोग से प्रथम धारा के संघर्ष को निष्फल करके सत्ता प्राप्त करते रहे हैं। तीसरी धारा विदेशी मूल के आक्रांताओं की है जिसमें लगभग नब्बे प्रतिशत से अधिक लोग भारतीय मूल के ही हैं किन्तु धर्मांतरण के कारण स्वयं को अरब की परंपराओं के निकट मानकर अपना संबंध तुर्कों और अरबों से जोड़कर स्वयं को विजेता की भूमिका में देखते हैं। उनकी दृष्टि में पहली परंपरा उनकी शत्रु है और दूसरी परंपरा उनकी मित्र है क्योंकि उसका सहयोग उनके लक्ष्य 'गजबा-ए-हिन्द' की पूर्ति में सहायक है। इन तीनों धाराओं की टकराहट भारतीय समाज सागर में जब-तब तूफान लाती रहती है।

भारतवर्ष की पहली सशक्त धारा-परंपरा में पर्वतक (पोरस) और चंद्रगुप्त हैं, जो भारतीय भूमि और संस्कृति के लिए जीवन दांव पर लगाते हैं। महाराज पर्वतक तक्षशिला के युवराज अम्भी की तरह

सिकंदर के लिए भारत का द्वार नहीं खोलते, युद्ध करते हैं। यह अलग बात है कि उनकी पराजय उन्हें सिकंदर से सन्धि करने को विवश बना देती है। फिर भी राष्ट्र की रक्षा के लिए उनका प्रयत्न प्रणम्य है। चंद्रगुप्त अपने गुरु चाणक्य के मार्गदर्शन में सेल्यूकस को पराजित कर राष्ट्रीय अस्मिता की रक्षा करने में सफल होते हैं। विदेशी आक्रांताओं से रक्षा का दूसरा संघर्ष पृथ्वीराज चौहान और मोहम्मद गोरी के युद्धों में देखने को मिलता है।

यहां भारत-हृदय सम्राट की अप्रतिम वीरता उनकी रणनीतिक अकुशलता के कारण व्यर्थ हो जाती है और गोरी की कुटिलता को भारत के हृदय पर पदाघात करने का अवसर मिल जाता है। पांडवों का गौरवशाली इंद्रप्रस्थ विदेशी आक्रमणकारियों की मुट्ठी में चला जाता है। देर तक संघर्ष थमा रहता है किंतु राष्ट्रीय गौरव के रक्षा के लिए दबी-ढंकी आग अलाउद्दीन खिलजी के समय में रावल रतनसिंह के शौर्य और पद्मिनी के जौहर की लपटों में भारतीय स्वातंत्र्य-चेतना का परचम लहराती है, मेवाड़ के महाराणाओं में नई लपट लेकर धधक उठती है। महाराणा सांगा, महाराणा कुंभा, महाराणा प्रताप आदि इस परंपरा को हर संभव बलिदान देकर भी आगे बढ़ाते हैं। परवर्ती कालखंड में संघर्ष की यही धारा महाराष्ट्र में शिवाजी, मध्यभारत में छत्रसाल और पंजाब में सिख गुरुओं के संघर्ष का प्लावन-प्रवाह लेकर उमड़ती है और मुगल सत्ता को धूल चटाती है।

ब्रिटिश शासन के विरुद्ध इस धारा के वीर अट्ठारह सौ सत्तावन का महासमर रचते हैं। इसके विफल होने पर बाद के वर्षों में कूका आंदोलन और सशस्त्र संघर्ष के प्रयत्न करते हुए चंद्रशेखर आजाद, ठाकुर रोशन सिंह, रामप्रसाद विस्मिल, वासुदेव बलवंत फड़के, मदन लाल धींगरा, खुदीराम बोस, प्रफुल्लचंद्र चाकी आदि असंख्य क्रांतिकारियों के रूप में फांसियों पर चढ़ते हैं। विनायक दामोदर सावरकर बनकर अंडमान की जेलों में अमानुषिक यंत्रणाएँ झेलते हैं और सुभाष चंद्र बोस के रूप में सर्वथा साधन-विहीन होकर भी आजाद हिंद फौज का गठन कर दुश्मन की छाती पर आ गरजते हैं। कांग्रेस में इस धारा का प्रभाव लोकमान्य तिलक, पंडित मदनमोहन मालवीय, कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी और सरदार बल्लभ भाई पटेल जैसे नेताओं में ही दिखाई देता है। इस धारा में वे मुसलमान भी शामिल हैं जो भारत को अपना देश मानते हैं और यहाँ की सनातन परंपराओं के साथ समरस होकर रहने के अभ्यासी हैं।

दाराशिकोह से लेकर अशफाक उल्ला खाँ, वीर अब्दुल हमीद और ए.पी.जे. अब्दुल कलाम जैसे असंख्य भारतीय मुसलमानों का कृतित्व इस तथ्य का साक्षी है। भारत की सनातन परंपराओं, सांस्कृतिक-मान्यताओं, धार्मिक-प्रतिष्ठानों और जैन, बौद्ध आदि भारतीय चिंतनधाराओं की अस्मिता के लिए, हिंदुत्व के अस्तित्व के लिए यह धारा संघर्ष कर रही है, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और संघ के अनुषांगिक संगठनों के रूप में राष्ट्र की सेवा और सुरक्षा हेतु सतत संघर्षरत है। इस परंपरा धारा के लोग कभी स्वतंत्र भारत में लोकतंत्र की संवैधानिक छांव तले आपातकाल के नाम पर दूसरी परंपरा से जुड़े सत्ताधीशों के अत्याचार सहते हैं तो कभी गोधरा स्टेशन पर तीसरी धारा के लोगों द्वारा जिंदा जला दिए जाते हैं। स्वतंत्र भारत में राजनीतिक स्तर पर पहले जनसंघ और फिर भारतीय जनता पार्टी और उसके सहयोगी दल इस धारा के वर्तमान संवाहक हैं।

पारस्परिक राजनीतिक विद्वेष की आग में आत्मगौरव और स्वाभिमान की बलि देकर भी अपने निजी स्वार्थ और अहंकार पूर्ण हठां को महत्व देने वाली दूसरी परंपरा का प्रथम उद्गम भारतीय राजा पोरस

के विरुद्ध यूनानी आक्रांता सिकंदर का साथ देने वाले राजा अम्भि के स्वार्थपूर्ण आचरण में मिलता है। अपनी क्षेत्रीय सीमाओं में विलासमग्न मगध नरेश घनानंद की राष्ट्रीय सुरक्षा के प्रति उदासीन दृष्टि भी इसी परंपरा धारा का आदिस्रोत है। यह धारा विदेशी आक्रांताओं को विजय दिलाकर और भारतीयता की रक्षक शक्तियों के विनाश में सहायक बन कर सत्ता सुख भोगने की लोभ-लिप्सा से ग्रस्त रही है। जयचंद द्वारा मोहम्मद गोरी की सहायता किया जाना और आगे चलकर राजा मानसिंह, टोडरमल आदि का अकबर की सत्ता को शक्तिमान करते हुए मेवाड़ के पराभव का कारण बनना इस स्थिति का प्रमाण है। शिवाजी के समय में राजा जयसिंह भी इसी परंपरा के ध्वजवाहक हैं।

औरंगजेब निर्धन हिंदू जनता पर जजिया कर लगाता है, बलात धर्मांतरण के लिए उन्हें विवश करता है, प्रसिद्ध मंदिरों को तोड़ने के लिए नित नए फरमान जारी करता है और अपनी शासन सीमाओं में समस्त भारतीय परंपराओं को समूल नष्ट कर डालने के लिए कटिबद्ध मिलता है लेकिन जयसिंह को कोई कष्ट नहीं होता। उसका राज्य उसके अधिकार में सुरक्षित है तो उसे अपने अन्य धर्मावलंबियों पर हो रहे अत्याचारों से कोई फर्क नहीं पड़ता। वह तो औरंगजेब की मनसबदारी में ही मस्त रहता है। भारत के प्राय: सभी राजघराने मुगलसत्ता की दासता भरी छाँव में राज्य सुख भोगने के उपरांत उसकी शक्ति क्षीण होते ही शक्तिशाली अंग्रेजों की गोद में जा बैठते हैं और उनकी कृपा-छाया में राज्य सुख भोगते हैं। उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम दशकों और बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में गांधी-नेहरू के नेतृत्व वाली कांग्रेस अंग्रेजों के साथ मिलकर आजादी की लड़ाई लड़ती है और अनेक अवसरों पर उनका सहयोग करती हुई भारतीयों को अहिंसा का पाठ पढ़ाते हुए अंग्रेजों का सुरक्षा कवच बनाती है।

इसीलिए स्वतंत्रता-संघर्ष में कांग्रेस का कोई नेता ना कभी काले पानी की सजा पाता है, ना फांसी पर चढ़ाया जाता है। वह ब्रिटिश-सत्ता के साथ प्रायोजित-सीमित संघर्ष करता हुआ उसके तथाकथित जेलखानों में भी राजनीतिक कैदी के नाम पर अंग्रेजी शासन द्वारा दी जाने वाली सुख-सुविधाओं का भरपूर उपभोग करता है। दूसरी धारा के ये कथित देशभक्त कहीं पर भी स्वतंत्रता की लड़ाई में पहली धारा का समर्थन करते दिखाई नहीं देते। मानसिंह और जयसिंह की परंपरा के ये नेता सत्ता-प्राप्ति की हड़बड़ी में अंग्रेजों की मंशा के अनुरूप देश का विभाजन स्वीकार कर सत्ता पर अधिकार प्राप्त कर लेते हैं। एक ओर दिल्ली मानसिंह, जयसिंह की तर्ज पर हिन्दुस्तान में आजादी का उत्सव मनाती हुई दिखाई देती है तो दूसरी ओर पाकिस्तान में तीसरी परंपरा के लोग तांडव करते हुए हिंदुओं-सिखों का भीषण संहार कर डालते हैं किंतु दूसरी परंपरा के लोग पीड़ितों-विस्थापितों को ही उनकी दुर्दशा के लिए उत्तरदाई करार देकर अपने सिंहासन के पाए मजबूत करने में जुट जाते हैं।

अंग्रेजों के चले जाने के बाद परिवर्तित राजनैतिक परिस्थितियों में इस दूसरी परंपरा के लोगों का सत्ता के लिए सीधा संघर्ष पहली परंपरा के नेताओं से होता है अत: वे उसे प्रभावहीन करने के लिए फिर तीसरी परंपरा को पुष्ट करने में लग जाते हैं, उसमें अपना वोट बैंक तलाशते हैं। उन्हें अतिरिक्त सुविधाएं देकर उनकी आक्रामकता को पोषित करते हैं और उनके संख्या बल में अपार वृद्धि के अवसर देकर, भारतीय-संस्कृति को दांव पर रखकर सत्ता पर काबिज रहने के लिए संगठित होते रहे हैं। कांग्रेस के नेताओं के साथ-साथ टी.एम.सी., सपा, बसपा, आप आदि अन्य अनेक दलों की नीतियाँ इस तथ्य की पुष्टि करती हैं। इनकी सफलता के साथ ही तीसरी धारा की आक्रामकता बढ़ जाती है। भारत की मूल संस्कृति पर संकट के बादल और घने हो जाते हैं। पश्चिम बंगाल की वर्तमान अशांत स्थितियाँ और

हिंसक घटनाएं यही बताती हैं।

महमूद गजनबी और मोहम्मद गोरी की आक्रामक, हिंसक और सर्वग्रासी तीसरी धारा का विकास अलाउद्दीन खिलजी, बाबर, अकबर, औरंगजेब आदि शासकों में मिलता है। इनकी दुरभिलाषा भारतवर्ष के समस्त चिंतन-दर्शन, ज्ञान-विज्ञान, मठ-मंदिर और सामाजिक सांस्कृतिक रीतियों-नीतियों को सर्वथा समाप्त कर समूचे देश के इस्लामीकरण की है। 'गजवा-ए-हिंद' का लक्ष्य लेकर भारतीयता का सर्वस्व निगल जाने को आतुर इस तीसरी परंपरा ने आरंभ से ही दूसरी परंपरा के सहयोग से प्रथम परंपरा को नष्ट करने का प्रयत्न किया है और समूचे देश में अपने पैर पसार लिए हैं। विगत सात-आठ सौ वर्षों से हिंसा, हत्या,बलात्कार और लूट का सहारा लेती हुई इस धारा ने इस्लामिक शासनकाल में तो सत्ता के बल पर अपना विस्तार किया ही, ब्रिटिश-शासन काल में भी उसने अंग्रेजों को प्रभावित करके अपने मनोकूल निर्णय करवाने में अपूर्व सफलता प्राप्त की।

खिलाफत आंदोलन के समय मालाबार में मोपलाओं की पैशाचिक पशुता, नोआखाली का भीषण नरसंहार आदि अनेक दुर्घटनाएं इस स्थिति की साक्षी हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय देश का विभाजन कराके भी इस धारा ने अपनी दुरभिलाषा की पूर्ति का भरपूर अवसर निर्मित किया। स्वतंत्र-भारत में भी दूसरी परंपरा के शासकों की कृपा-छाया के कारण उसे कश्मीर घाटी से भारतीयता को निर्मूल और निर्वासित करने का अवसर मिला। विडंबना यह है कि दूसरी परंपरा धारा के नेता और उनके समर्थक जनसमुदाय तीसरी परंपरा की सर्वग्रासी हिंसक प्रवृत्ति के अमानवीय स्वरूप को बार-बार देखकर भी अपनी अस्तित्व रक्षा के लिए चिंतित नहीं दिखाई देते। वो तीसरी परंपरा में जन्म लेने वाले हुमायूँ और दारा शिकोह जैसे उदार और विचारशील सहअस्तित्व के विश्वासी इतिहास पुरुषों का नाम भी नहीं लेते। रहीम, रसखान, नजीर अकबराबादी और अकबर इलाहाबादी जैसे समन्वयकारी कवियों की ओर उनकी दृष्टि ही नहीं जाती। तीसरी धारा की कट्टरता को प्रोत्साहित करने बाले अल्लामा इकबाल उन्हें अधिक अच्छे लगते हैं।

वह इकबाल, जिन्होंने अपनी शायरी से पाकिस्तान बनवाने के लिए तीसरी धारा की विभाजनकारी मानसिकता को पुष्ट किया। वह इकबाल, जो अपनी रचनाओं में हिंदुओं को कबूतर के समान कमजोर और मुसलमानों को बाज के समान ताकतवर बताकर उनकी आक्रामकता को प्रोत्साहित करते रहे, नोआखाली जैसे हत्याकांड कराते रहे। सच तो यह है कि तीसरी धारा की आक्रामक मानसिकता आज भी उग्र रूप धारण किए हुए है। जहां भी दूसरी धारा के लोग सत्ता में होते हैं वहां वह अपना आतंककारी भयावह रूप प्रकट करती ही है । अरविंद केजरीवाल के सत्ता में आते ही दिल्ली में होने वाला भीषण दंगा और अब पश्चिम बंगाल में ममता को बहुमत मिलते ही वहां होने वाली हिंसा और आगजनी इसकी साक्षी है। तीसरी धारा की उग्रता और आक्रामकता का उत्तर उसी की भाषा में देने का प्रयत्न प्रथम धारा के संवाहक आज भी कर रहे हैं इसीलिए जंग जारी है किन्तु इस संघर्ष में उसे विजय तब तक नहीं मिल सकती जब तक दूसरी धारा के लोग तीसरी धारा की आक्रामकता का पोषण करते रहेंगे। पहली और तीसरी धारा के संघर्ष की समाप्ति के लिए दूसरी धारा की समन्वयकारी भूमिका आवश्यक है-ऐसी भूमिका जिसमें वह तीसरी धारा की आक्रामक क्रिया को नियंत्रित कर पहली धारा को प्रतिक्रिया की विवशता से रोक सके। जब तक सत्ता का अतिरिक्त मोह त्यागे बिना दूसरी धारा इस भूमिका का निर्वाह नहीं करती तब तक इस जंग का रुक पाना और भारतीय समाज में स्थायी शांति की स्थापना हो

पाना सर्वथा असंभव है।

अब भारतीय जनमानस को तय करना होगा कि उसे पहली धारा को सशक्त कर सनातन भारतीय परंपराओं को चिरजीवी बनाना है या फिर दूसरी धारा का अंधा समर्थन कर तीसरी धारा को अपने मंसूबे पूरे करने का अवसर देना है। हिंदुस्तान का एक बड़ा भाग हमारे पुरखों की भूलों के कारण अफगानिस्तान, पाकिस्तान और बांग्लादेश के रूप में पहले ही हम से अलग हो चुका है। कश्मीर और बंगाल अलग होने की ओर अग्रसर हैं। अगर अभी भी आंखें नहीं खुलीं तो इस शताब्दी के अंत तक संपूर्ण भारतवर्ष यूनान, रोम और मिस्त्र की प्राचीन सभ्यताओं की तरह ऐतिहासिक अध्ययन की विषय वस्तु बन जाएगा। इस्लामीकरण की सर्वग्राही मानसिकता सब कुछ निकल जाएगी। तब पहली धारा के साथ-साथ दूसरी धारा के लिए भी यहां कोई स्थान ना होगा। तब झंडे में केवल हरा रंग बचेगा। यदि हमें अपने राष्ट्रीय-ध्वज में केसरिया, श्वेत और नीले रंग को बचाना है तो उपर्युक्त तथ्यों पर गंभीरतापूर्वक विचार करना होगा।

डॉ. कृष्णगोपाल मिश्र
विभागाध्यक्ष-हिन्दी
शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय
होशंगाबाद म.प्र.
मो – 9893189646